Vol.11 July'18 No.12
Annual Subscription : Rs 100
Rs. 10/- per copy

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

वेदोऽखिलो धर्ममूलम्

A Monthly publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

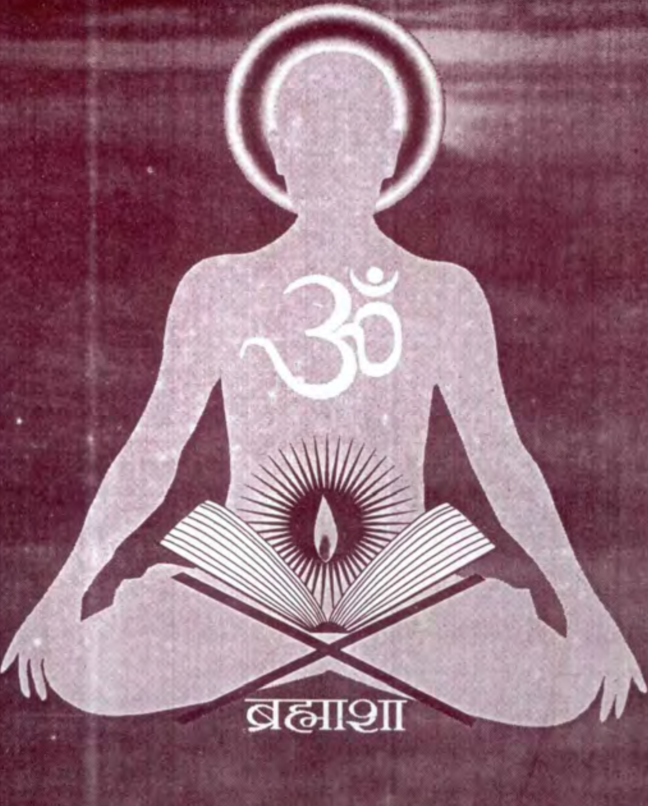

Brahmasha India Vedic Research Foundation
ब्रह्माशा इंडिया वैदिक रिसर्च फाउन्डेशन
C2A/58 Janakpuri, New Delhi - 110058

जीना तो सीख लो तुम
मरना तो सीख लो तुम

-वे

बचपन गुजर गया, जवानी गुजर गई,
हमने कभी न जाना, इनकी कहानी क्या है?

होती जवानी क्या है, इसकी रवानी क्या है,
देखा सदा बुढ़ापा, उसने कमर है तोड़ी,
जो बोझ था उठाया, उसने हमें मिटाया,
क्या खूब जिन्दगी है, क्या जोर वक्त का है।

हम चल रहे अकेले, मंजिल है दूर लेकिन,
बंजर जमीन देखी, काँटे बिछे हुए थे।
अपने थे जो जहाँ में, वे भी न जान पाए,
हम जल रहे हैं कैसे, हम मिट रहे हैं क्यों कर?

जो ख्वाब थे हमारे, वे भी न जान पाए,
तुम ख्वाब देखते हो, हम ख्वाब बन रहे हैं,
जिन्दा हैं हम कहो क्यों, हम को पता नहीं हैं?
क्या मिल रहा है हमको, हमको पता नहीं है,

जो जख्म है जिगर के, किसको उन्हें दिखाएँ?
जो स्वप्न हैं अधूरे, कैसे उन्हें सजाएँ?

कोई हमें बता दे, हम को मिली सजा
जिसके लिए जले हम, उसने हमें जला

अब आखरी घड़ी में, तूफान देखते हम,
है जोर मन में इतना, तूफान रोकते हम
पर दूर तक अकेले, चलना बड़ा कठिन
किसको मगर पुकारें, किसको कहें जलो

तुम जी रहे हो लेकिन, जिन्दगी को खो
तुम मौज मानते हो, पर जाना तुम्हें भी
यह कहकहे, ये मस्तियाँ, ये शान की ज
क्या साथ जा सकेंगी, तुमने कभी है सो

मैं सबको पुकारता हूँ, सबको बुला रहा
सबसे यह कह रहा हूँ, सबको बुला रहा
तुम जिन्दगी बचा लो, जो सज रही हैं ल
उनको गले लगा कर, हँसना तो सीख लो

जीना तो सीख लो तुम। मरना तो सीख लो

सूचना

आपको ज्ञात ही होगा कि राजस्थान प्रान्त का उदयपुर नगर एक अ मनोरम नगर है। यहीं पर स्थित 'नवलखा महल' कालजयी ग्रन्थ सत्या प्रकाश की रचनावली है। 1992 में यह आर्यसमाज को हस्तगत हुआ तब से अब तक प्रभु कृपा से भगीरथ पुरुषार्थ तथा आप लोगों के स्ने से यह एक सुन्दर स्मारक बन चुका है। जिसके दर्शनार्थ लगभग 3000 (तीस हजार) पर्यटक प्रतिवर्ष आते हैं। यहाँ प्रतिवर्ष आयोज्य सत्यार्थप्रका महोत्सव भी आर्य जगत में विशिष्ट स्थान रखते हैं।

21वाँ सत्यार्थ प्रकाश महोत्सव दिनांक 06 अक्टूबर से 8 अक्टूबर 2018 तक आयोज्य है।

इसी में पधारने हेतु यह अग्रिम अनुरोध है। मानस मनावें इष्टमित्रों परिजनों के साथ आने का पर्यटन तथा धर्मलाभ साथ-साथ हो जाएगा

निवेदिक : श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास
नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर-313001
दूरभाष - 0294-2417694, 7229948860, 9314235101

BRAHMASHA INDIA VEDIC RESEARCH FOUNDATION

C2A/58, Janakpuri,
New Delhi-110058
Tel :- 25525128, 9313749812
*email:*deeukhal@yahoo.co.uk
brahmasha@gmail.com
Website : www.thearyasamaj.org
of Delhi Arya Pratinidhi Sabha

Sh. B.D. Ukhul
Secretary
Dr. B.B. Vidyalankar 0124-4948597
President
Col.(Dr.) Dalmir Singh (Retd.)
V.President
Dr. Mahendra Gupta *V.President*
Ms. Deepti Malhotra
Treasurer

Editorial Board
Dr. Bharat Bhushan Vidyalankar,
Editor
Dr. Harish Chandra
Dr. Mahendra Gupta
Acharya Gyaneshwararya

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र दिल्ली ही होगा।

Printed & Published by
B.D. Ukhul for Brahmasha India Vedic Research Foundation
Under D.C.P.
License No. F2 (B-39) Press/ 2007
R.N.I. Reg. No. DELBIL/ 2007/22062
Price : Rs. 10.00 per copy
Annual Subscription : Rs. 100.00

Brahmarpan July' 18 Vol. 11 No.12
आषाढ़-श्रावण 2075 वि.संवत्

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

A bilingual Publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

CONTENTS

1. जीना तो सीख लो तुम मरना तो सीख लो तुम 2
–वेदभिक्षु
2. संपादकीय 4
3. सांख्य दर्शन 7
–डॉ. भारत भूषण
4. स्वामी रामेश्वरानन्द जी महाराज (जन्मदिवस पर विशेष) 8
–शिवकुमार आर्य
5. स्वतंत्रता सेनानी वीर सावरकर (जन्मदिवस पर विशेष) 10
–डॉ. भारत भूषण विद्यालंकार
6 मूर्द्धन्य संन्यासी एवं वैदिक सिद्धांतों के निष्ठावार प्रचारक (स्वामी दीक्षानन्द जी सरस्वती) 15
–डॉ. सुन्दरलाल कथूरिया
7. अहिंसात्मक सत्याग्रहों द्वारा योगदान
–सत्यप्रिय शास्त्री 20
8. कश्मीर घाटी उत्पत्ति का आधुनिक सन्दर्भ में कथामय वर्णन 26
–नरेन्द्र सहगल
9. मौत तो आनी ही है, उससे भला क्या डरना! 32
–खुशवंत सिंह
10. A Unified India is Non-Negotiable 34
11. Einstein's Dharma 35
-Ranjeni A Singh

संपादकीय

कर्नाटक का महानाटक

–डॉ. भारत भूषण विद्यालंकार

कर्नाटक का चुनाव सभी दलों के लिए महत्त्वपूर्ण था। इसके लिए कांग्रेस और जद(से.) ने चुनाव की तारीख घोषित होने से दो–ढाई महीने पूर्व से ही तैयारी शुरू कर दी थी। इनकी देखा–देखी भारतीय जनता पार्टी भी चुनाव मैदान में पीछे नहीं रही। भारतीय जनता पार्टी दक्षिण भारत में प्रवेश के लिए उचित अवसर की तलाश में थी। उधर सिद्धारमैया के नेतृत्व वाली कांग्रेस सरकार ने एक चाल चली। उसने भाजपा के परंपरागत वोट बैंक समझे जाने वाले लिंगायत–वीरशैव समुदाय को अपने पक्ष में लाने के लिए लिंगायतों को धार्मिक अल्पसंख्यक का दर्जा दिलाने के लिए केन्द्र सरकार के पास प्रस्ताव भेजा। इसे सिद्धारमैया का 'मास्टर स्ट्रोक' माना जा रहा था। इसके समर्थन के लिए सिद्धारमैया ने भी लिंगायत मठों से सम्पर्क स्थापित किया। कांग्रेस के इस लिंगायत कार्ड की तोड़ खोजने के लिए भाजपा अध्यक्ष अमित शाह भी कर्नाटक के रणक्षेत्र में जा पहुँचे। उन्होंने सर्वप्रथम तुमकुर स्थित सिद्धगंगा मठ के श्री श्री शिवकुमार स्वामी का आशीर्वाद लिया। कर्नाटक के कुछ क्षेत्रों में लिंगायत और दलित समुदाय के मतों का विशेष महत्त्व है। इस चुनाव में तीसरा पक्ष जनता दल (सेक्युलर) था जिसे कांग्रेस भाजपा की मीटिंग घोषित करती रही थी। स्थानीय दल के रूप में उनकी भागीदारी भी महत्त्वपूर्ण थी।

जैसे–जैसे चुनाव का समय निकट आने लगा सभी दलों के प्रचार में तेजी आने लगी। कांग्रेस के अध्यक्ष श्री राहुल गाँधी और सिद्धारमैया ने कई रैलियाँ की तो प्रधानमंत्री नरेन्द्र

मोदी और भारतीय जनता पार्टी के अध्यक्ष अमित शाह और येदियुरप्पा ने भी 20-25 जनसभाओं को संबोधित किया। उधर जनता दल (सेक्युलर) अपने स्तर पर रैलियाँ करते रहे। इतना सब होते हुए भी कहना मुश्किल था कि ऊँट किस करवट बैठेगा? सभी दल अपने बहुमत का दावा कर रहे थे। अन्ततः 12 मई चुनाव का दिन आ गया। चुनाव के बाद ऐक्जिट पोल के अनुमानों में त्रिशंकु विधान सभा के संकेत मिले। साथ ही कुछ अनुमानों में भाजपा के सबसे बड़ी पार्टी होने के भी संकेत थे। आखिर 15 मई को मतों की गिनती से धीरे-धीरे स्थिति स्पष्ट होने लगी और भारतीय जनता पार्टी 104 विधायकों के साथ सबसे बड़ी पार्टी बन कर उभरी। दूसरी ओर कांग्रेस को 78 और जनता दल (से.) को 38 सीटें मिलीं तथा किसी भी एक दल को पूर्ण बहुमत नहीं मिला। ऐसी स्थिति में पहले कांग्रेस ने अवसर का लाभ उठा कर जनता दल (से.) को समर्थन देकर श्री कुमार स्वामी को मुख्यमंत्री बनाने के लिए राज्यपाल के समक्ष दावा पेश कर दिया और विश्वास दिलाया कि उनके पास पर्याप्त संख्या बल है इसलिए यह गठबंधन स्थिर सरकार प्रदान करेगा। उधर भारतीय जनता पार्टी ने सबसे बड़ा दल होने के नाते राज्यपाल से सरकार बनाने का दावा पेश किया जिसे राज्यपाल ने स्वीकार कर लिया और अगले दिन युदियुरप्पा को प्रातः 9.00 बजे शपथ ग्रहण करने का समय दे दिया। साथ ही उन्हें 15 दिन में अपना बहुमत सिद्ध करने को कहा। राज्यपाल के इस निर्णय के विरुद्ध कांग्रेस और जनता दल (से.) ने रात को ही सर्वोच्च न्यायालय में जाने का फैसला किया। इनका कहना था कि राज्यपाल का यह निर्णय लोकतांत्रिक मूल्यों के खिलाफ है। कांग्रेस के नेता व वरिष्ठ वकील अभिषेक मनु सिंघवी ने याचिका दाखिल कर शपथ ग्रहण पर रोक लगाने की माँग की और राज्यपाल के निर्णय

को चुनौती दी तथा माँग की कि इस मामले में तत्काल सुनवाई हो। इस विषय में रजिस्ट्रार ने मुख्य न्यायाधीश से संपर्क किया। मामले की अर्जेंसी को देखते हुए चीफ जस्टिस दीपक मिश्रा ने तत्काल तीन जजों की बेंच गठित कर दी। बेंच के सामने रात को 2.11 बजे सुनवाई शुरू हुई जो सुबह 5.28 तक चली।

जजों ने पूछा कि भारतीय जनता पार्टी ने किस आधार पर सरकार बनाने का दावा किया? क्या आपके पास वह पत्र है? श्री सिंघवी ने कहा कि पत्र तो हमारे पास नहीं है। इसलिए उन्हें कल शपथ लेने से रोका जाए और कल पत्र देख लिया जाए। जज ने कहा हम शपथ ग्रहण पर तो रोक नहीं लगा रहे हैं। येदियुरुप्पा ने जिस पत्र से सरकार बनाने का दावा पेश किया है उसे कल 10.30 बजे कोर्ट में पेश करें। कांग्रेस रातभर उधेड़बुन में लगी रही परन्तु कोर्ट से कोई आदेश न मिला। सुबह 9.30 बजे येदियुरुप्पा ने शपथ ले ली। शपथ के समय भाजपा कार्यकर्त्ताओं ने राजभवन के बाहर "वन्देमातरम्" और "मोदी मोदी" के नारे लगाये।

अगले दिन सुप्रीम कोर्ट ने हाई-वोल्टेज सुनवाई के बाद शनिवार शाम को येदियुरप्पा को फ्लोर टेस्ट का आदेश दिया। अब सबसे बड़ा प्रश्न यह था कि इतने कम समय में भाजपा सात विधायकों का समर्थन कहाँ से जुटाएगी?

मुख्यमंत्री के रूप में 55 घंटे बिताने के बाद बीजेपी नेता येदियुरुप्पा ने बहुमत परीक्षण के समय से ठीक पहले त्यागपत्र देकर यह स्वीकार कर लिया कि उनके पास विधायकों की आवश्यक संख्या नहीं है। इसी संदर्भ में 25 मई को श्री कुमार स्वामी ने बहुमत सिद्ध करके मुख्यमंत्री पद की शपथ ग्रहण कर ली। और इसी के साथ कर्नाटक के हाईवोल्टेज ड्रामे (महानाटक) का पटाक्षेप हो गया।

संपादक

सांख्य दर्शन (अध्याय-1, सूत्र-126)

-डॉ. भारत भूषण विद्यालंकार

आत्मा की अनेकता का प्रतिपादन कर उसकी अन्य विशेषताओं का निरुपण किया जाता है। जिस तरह सारी प्रकृति का अधिष्ठाता ईश्वर है, उसी तरह शरीर का अधिष्ठाता जीवात्मा है। तथा यह सारी अनुभूतियों का साक्षी है। यदि साक्षी होना इसका स्वरूप है, तो विवेक ज्ञान होने पर भी साक्षित्व के बने रहने से मोक्ष न होना चाहिए। इसका समाधान सूत्रकार निम्नलिखित सूत्र में करते हैं, सूत्र है-

साक्षात्संबंधात् साक्षित्वम्।।126।।

अर्थ-(साक्षात् संबंधात्) साक्षात् संबंध से (साक्षित्वम्) साक्षी होना है।

भावार्थ- आत्मा का स्वरूप साक्षी होना नहीं है, बल्कि बुद्धि आदि के साथ साक्षात् संबंध होने से वह साक्षी कहलाता है। जब तक अविवेक बना रहता है, बुद्धि आदि के साथ आत्मा का संबंध बना रहता है। विवेक ज्ञान हो जाने पर अविवेक की स्थिति नहीं रहती। इसलिए उस अवस्था में साक्षित्व मोक्ष का बाधक नहीं रहेगा। कुछ पुस्तकों में सूत्र का पाठ **"अक्षसंबंधात् साक्षित्वम्"** दिया गया है। 'अक्ष' इन्द्रिय अथवा करण को कहते हैं। इन्द्रिय अथवा बुद्धि आदि करणों के साथ संबंध होने से आत्मा को साक्षी कहा जाता है। अर्थ में अन्य कोई अन्तर नहीं है। साक्षी का व्याकरण (पा. 5/2/91) के अनुसार 'द्रष्टा' अर्थ नियत है। देहेन्द्रिय आदि के साथ संपर्क रहने पर द्रष्टृत्व सार्थक व उपयुक्त हो पाता है। यदि यह आत्मा का स्वरूप माना जाए तो भी अनुप्रयोग की अवस्था में मोक्ष का बाधक क्यों होगा?

दी हिबिस्कस,

बिल्डिंग-5, एपार्ट नं.-9बी

सेक्टर-50, गुड़गाँव (हरियाणा) 122009

फोन-0124-4948597

स्वामी रामेश्वरानन्द जी महाराज
(निर्वाण दिवस : 08 मई 1990)

-शिवकुमार आर्य

आर्य जगत के मूर्धन्य विद्वान, वैदिक सिद्धान्तों के प्रबल समर्थक व पोषक स्वामी रामेश्वरानन्द जी महाराज का जन्म उत्तर प्रदेश के एक कृषक परिवार में सन् 1890 में हुआ था। उनका बाल्यकाल बड़ा कष्टदायक रहा क्योंकि अभी ये 6 मास के ही थे कि इनकी माता जी की मृत्यु हो गई, आपकी दादी जी ने आपका पालन पोषण किया और दुर्भाग्य से 10 वर्ष के बाल्यकाल में पिता का साया भी सिर से उठ गया। गाँव में रहकर ही कक्षा 4 उत्तीर्ण की। विरक्त मन में गृह त्याग की भावना बलवती होती चली गई। अंततः 14-15 वर्ष की आयु में घर त्याग दिया। गढ़मुक्तेश्वर में स्वामी गंगा दास जी से भेंट हुई, हापुड़ में एक ब्रह्मचारी जी ने आपको काशी जाकर पढ़ने की प्रेरणा दी। स्वामी कृष्णानन्द जी दशनामी साधु से आपने संन्यास की दीक्षा ली। वे जप, तप, पूजा-पाठ में मगन रहने लगे। आप नित्य हनुमान चालीसा और राम चरित्र मानस पाठ करते थे। वे काशी में कुछ समय रहे। वहीं से विचार बना कि मोक्ष प्राप्ति के लिए तीर्थ यात्रा करनी चाहिए। इसलिए आप काशी से प्रयागराज, पुष्कर और मथुरा आदि होते हुए दिल्ली पहुँचे।

आर्य समाजी बनना : दिल्ली में आकर आपने लोगों से प्रशंसा सुनी कि यमुनातट पर एक भीष्म ब्रह्मचारी हैं जिनके नित्य उपदेश होते हैं। तीन दिन तक आप भीष्म जी ब्रह्मचारी के उपदेश उनकी कुटिया पर रहकर सुनकर आनन्द लेते रहे, तीन दिन बाद आपको मालूम हुआ कि स्वामी भीष्म जी तो आर्य समाजी हैं। इस बात से आप बहुत दुखी हुए क्योंकि उस समय पौराणिक पंडितों व साधुओं ने यह अफवाह फैलाई हुई थी कि आर्य समाजी के दर्शन मात्र से ही सब पुण्यकर्म, जप-तप आदि नष्ट हो जाते हैं और मनुष्य नरकगामी हो जाता है। किन्तु आप स्वामी भीष्म जी के तेजस्वी बलिष्ठ शरीर व तर्कसंगत उपदेश से इतने प्रभावित हुए कि उन्हीं के

पास रहकर वैदिक ग्रन्थों का अध्ययन करने लगे और वे चार साल स्वामी जी के पास रहे। स्वामी भीष्म जी आपको एक अच्छा विद्वान् बनाना चाहते थे इसलिए आपको विद्याध्ययन हेतु साधु आश्रम हर्दुआगंज, गुरुकुल सिकन्द्राबाद, गुरुकुल ज्वालापुर हरिद्वार, संस्कृत कॉलेज बनारस और खुर्जा, दयानंद ब्रह्मविद्यालय लाहौर आदि अनेक स्थानों पर वैदिक शिक्षा के लिए भेजा जहाँ रहकर आपने विद्याग्रहण की।

स्वतन्त्रता आंदोलन में योगदान : बनारस अध्ययन के दौरान आपने सहपाठियों के साथ मिलकर अंग्रेज सरकार के खिलाफ आंदोलन में भाग लिया। जिसके कारण आपको गिरफ्तार कर लिया गया और पुलिस ने बड़ा बर्बरतापूर्ण व्यवहार आपसे किया, देहरादून में आप नेहरू जी के साथ जेल में रहे। 1935 में आप महावड संस्कृत पाठशाला में अध्यापन कार्य करते समय नमक कानून तोड़ने के जुर्म में जेल गए। सन् 1939 में आप स्वामी भीष्म जी के छोटे भाई पण्डित निहालचंद जी के साथ 72 सत्याग्रहियों के साथ हैदराबाद सत्याग्रह में नांदेड़ पहुँचे और साथियों सहित औरंगाबाद जेल में निज़ाम सरकार की कठोर यातनाएँ सहते रहे।

गुरुकुल घरौंडा की स्थापना

आप खुर्जा में कुछ विद्यार्थियों को लेकर अध्यापन कार्य कर रहे थे किन्तु अपने गुरु स्वामी भीष्म जी महाराज के आदेश से 17 अप्रैल 1939 को गुरुकुल घरौंडा चलाने लगे। 1957 में वे हिन्दी रक्षा आंदोलन के संचालक बने। स्वामी भीष्म जी के आदेश से आपने लोकसभा का चुनाव लड़ा और 1962 में आप करनाल सीट से भारतीय जनसंघ के सांसद बने। 1966 में गौ-रक्षा हेतु संसद परिसर में 15 दिन का अनशन किया। इसी दौरान गौ-रक्षा आंदोलन में आपने तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी को संसद में घेरा और हजारों साधुओं के साथ पार्लियामेंट का घेराव किया।

स्वामी रामेश्वरानन्द जी महाराज ने आजीवन आर्य समाज का बड़ा प्रभावशाली ढंग से काम किया।

"जीवेम शरदः शतम्" के वेद वाक्य को चरितार्थ करते हुए आदरणीय स्वामी रामेश्वरानन्द जी महाराज 08 मई 1990 को नश्वर शरीर को छोड़कर हमसे विदा हुए।

स्वतंत्रता सेनानी वीर सावरकर
(28 मई 1883 135वीं जयन्ती पर)

–डॉ. भारत भूषण विद्यालंकार

एक परिचय–

घटना उस समय की है जिस समय वीर सावरकर को दोषी ठहराकर अंग्रेज जज की अदालत में पेश किया गया तो जज ने कहा कि इस शख्स के दोषों को गिनाया जाए, जब विरोधी पक्षकार ने सावरकर के दोषों की लिस्ट जज को सौंपी तो जज एकदम स्तब्ध रह गए और जज ने कहा कि इस इंसान के अपराधों की सूची तो इतनी लम्बी है कि आज तक इतने अपराध किसी ने नहीं किए होंगे। इस अपराधी की सजा एक जन्म में पूरी नहीं हो सकती इसलिए इस अपराधी को लगातार तीन जन्मों तक कालापानी में रहकर तेल निकालने की सजा दी जाती है। ऐसा सुनकर वीर सावरकर ऊँचे-ऊँचे ठहाके लगाकर कोर्ट में हँसने लगे, इस पर जज ने पूछा कि क्यों हँस रहे हो? वीर सावरकर ने कहा कि – मैं आपके द्वारा दी गई सजा पर हँस रहा हूँ।

जज ने कहा, सजा में हँसने जैसा क्या है?

सावरकर ने कहा– क्योंकि आपने कम-से-कम सनातन हिन्दू धर्म की परंपरा को स्वीकार तो किया। तो जज ने कहा कौन सी परंपरा? वीर सावरकर ने कहा कि ईसाइयत पुनर्जन्म में विश्वास नहीं करती। पुनर्जन्म सनातन हिन्दू धर्म की मूल अवधारणा है और आप अपनी परंपरा को भूल सनातन धर्म की परंपरा पर काम कर रहे हैं इसलिए आपने स्वीकार कर लिया है कि सनातन हिन्दू धर्म ही दुनिया का पुरातन धर्म है।

वीर सावरकर के इस बयान को सुनकर जज नतमस्तक हो गया और उसके मुँह से एक शब्द भी नहीं निकला।

अंग्रेज जज ने वीर सावरकर से कहा था कि– मिस्टर सावरकर, अब आप मरते दम तक अंडमान की बदनाम सेलुलर जेल में बंद रहेंगे, तब पूरे आत्मविश्वास से सावरकर ने कहा था कि मैं तब तक

नहीं मरूँगा जब तक मेरी मातृभूमि गुलाम है, आज़ादी का सूरज देखे बिना नहीं मर सकता और उनकी यह बात सत्य हुई।

दलित उद्धारक के रूप में वीर सावरकर

क्रांतिकारी वीर सावरकर का स्थान भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अपना विशेष महत्त्व रखता है। सावरकर जी पर लगे आरोप भी अद्वितीय थे उन्हें मिली सजा भी अद्वितीय थी। एक तरफ उन पर अंग्रेज सरकार के विरूद्ध युद्ध की योजना बनाने का, बम बनाने का और विभिन्न देशों के क्रांतिकारियों से सम्पर्क करने का आरोप था तो दूसरी तरफ उनको सजा मिली थी पूरे 50 वर्ष तक दो सश्रम आजीवन कारावास की। इस सजा पर उनकी प्रतिक्रिया भी अद्वितीय थी कि ईसाई मत को मानने वाली अंग्रेज सरकार कब से पुनर्जन्म अर्थात् दो जन्मों को मानने लगी है। वीर सावरकर को 50 वर्ष की सजा देने के पीछे अंग्रेज सरकार का मंतव्य था कि उन्हें किसी भी प्रकार से भारत अथवा भारतीयों से दूर रखा जाए जिससे वे क्रांति की अग्नि को न भड़का सकें। सावरकर के लिए शिवाजी महाराज प्रेरणा स्रोत थे। जिस प्रकार औरंगजेब ने शिवाजी महाराज को आगरे में कैद कर लिया था उसी प्रकार अंग्रेज सरकार ने भी वीर सावरकर को कैद कर लिया था। जैसे शिवाजी महाराज ने औरंगजेब की कैद से छूटने के लिए अनेक पत्र लिखे उसी प्रकार से वीर सावरकर ने भी अंग्रेज सरकार को पत्र लिखे। जब उनकी अंडमान की कैद से छूटने की योजना असफल हुई और उसे अनसुना कर दिया गया। तब वीर शिवाजी की तरह वीर सावरकर ने भी कूटनीति का सहारा लिया क्योंकि उनका मानना था अगर उनका सम्पूर्ण जीवन इसी प्रकार अंडमान की अँधेरी कोठरियों में निकल गया तो उनका जीवन व्यर्थ ही चला जाएगा। इसी रणनीति के तहत उन्होंने सरकार से सशर्त मुक्त होने की प्रार्थना की, जिसे सरकार द्वारा मान लिया गया। उन्हें रत्नागिरी में 1924 से 1937 तक राजनीतिक क्षेत्र

से दूर नज़रबंद रहना पड़ा। विरोधी लोग इसे वीर सावरकर का माफ़ीनामा, अंग्रेज सरकार के आगे घुटने टेकना और देशद्रोह आदि कहकर उनकी आलोचना करते हैं जबकि यह तो आपातकालीन धर्म अर्थात् कूटनीति थी।

मुस्लिम तुष्टिकरण को प्रोत्साहन देने के लिए कांग्रेसी सरकार ने अंडमान द्वीप के कीर्ति स्तम्भ से वीर सावरकर का नाम हटा दिया और संसद भवन में भी उनके चित्र को लगाने का विरोध किया। जीवन-भर जिन्होंने अंग्रेजों की यातनाएँ सही, मृत्यु के बाद उनका ऐसा अपमान करने का प्रयास किया गया। उनका विरोध करने वालों में कुछ दलित वर्ग की राजनीति करने वाले नेता भी थे। जिन्होंने अपनी राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा को पूरा करने के लिए उनका विरोध किया था। दलित वर्ग के मध्य कार्य करने का वीर सावरकर का अवसर उनके रत्नागिरी प्रवास के समय मिला। 8 जनवरी 1924 को सावरकर जी रत्नागिरी में प्रविष्ट हुए तो उन्होंने घोषणा की कि वे रत्नागिरी में दीर्घकाल तक आवास करने आए हैं और छुआछूत समाप्त करने का आन्दोलन चलाने वाले हैं। उन्होंने उपस्थित सज्जनों से कहा कि अगर कोई अछूत वहाँ हो तो उन्हें ले आयें और अछूत महार जाति के बंधुओं को अपने साथ बैल गाड़ी में बैठा लिया। पाठकगण उस समय फैली जातिवाद की कुप्रथा का सरलता से आकलन कर सकते हैं जब किसी भी शूद्र का सवर्ण के घर में प्रवेश तक निषिद्ध था। नगर पालिका के भंगी को नारियल की नरेटी में चाय डाली जाती थी। किसी भी शूद्र को नगर की सीमा में धोती के स्थान पर अंगोछा पहनने की ही अनुमति थी। रास्ते में महार की छाया पड़ जाने पर अशौच की पुकार मच जाती थी। कुछ लोग महार के स्थान पर बहार बोलते थे जैसे कि महार कोई गाली हो। यदि रास्ते में महार की छाया पड़ जाती थी तो ब्राह्मण लोग दोबारा स्नान करते थे। न्यायालय में साक्षी के रूप में महार को कटघरे में खड़े होने की अनुमति

न थी। इस भयंकर दमन के कारण महार समाज का मानों साहस ही समाप्त हो चुका था।

इसके लिए सावरकर जी ने दलित बस्तियों में जाने का, सामाजिक कार्यों के साथ-साथ धार्मिक कार्यों में भी दलितों के भाग लेने का और सवर्ण एवं दलित दोनों के लिए पतितपावन मंदिर की स्थापना का निश्चय लिया जिससे सभी एक स्थान पर साथ-साथ पूजा कर सकें और दोनों के मध्य दूरियाँ को दूर किया जा सके।

1. रत्नागिरी प्रवास के 10-15 दिनों के बाद सावरकर जी को मढ़िया में हनुमान जी की मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा का निमंत्रण मिला। उस मंदिर के देवल पुजारी से सावरकर जी ने कहा कि प्राण प्रतिष्ठा के कार्यक्रम में दलितों को भी आमंत्रित किया जाये। जिस पर वह पहले तो न करता रहा पर बाद में मान गया। श्री मोरेश्वर दामने नामक किशोर ने सावरकर जी से पूछा कि आप इतने साधारण मनुष्य की व्यर्थ इतनी चर्चा क्यों कर रहे थे? इस पर सावरकर जी ने कहा कि सैकड़ों लेख या भाषणों की अपेक्षा प्रत्यक्ष रूप में किए गए कार्यों का परिणाम अधिक होता है। अबकी हनुमान जयंती के दिन तुम स्वयं देख लेना।

2. मई 1929 को रत्नागिरी में श्री सत्य नारायण कथा का आयोजन किया गया जिसमें सावरकर जी ने जातिवाद के विरुद्‍ध भाषण दिया जिससे प्रभावित होकर लोग अपनी अपनी जातिगत बैठक को छोड़कर सभी महार-चमार एकत्रित होकर बैठ गए और सामान्य जलपान हुआ।

3. 1934 में मालवान में अछूत बस्ती में चायपान, भजन-कीर्तन, अछूतों को यज्ञोपवीत ग्रहण, विद्‍यालय में समस्त जाति के बच्चों को बिना किसी भेदभाव के बैठाना, सहभोज आदि हुए।

4. 1937 में रत्नागिरी से जाते समय सावरकर जी के विदाई समारोह में समस्त भोजन अछूतों द्‍वारा बनाया गया जिसे सभी सवर्णों-अछूतों ने एक साथ ग्रहण किया।

5. एक बार शिरगाँव में एक चमार के घर पर श्री सत्य

नारायण पूजा थी जिसमें सावरकर जी को आमंत्रित किया गया था। सावरकर जी ने देखा कि चमार महोदय ने किसी भी महार को आमंत्रित नहीं किया था। उन्होंने तत्काल उससे कहा कि आप हम ब्राह्मणों के अपने घर में आने पर प्रसन्न होते हैं पर मैं आपका आमंत्रण तभी स्वीकार करूँगा जब आप महार जाति के सदस्यों को भी आमंत्रित करेंगे। उनके कहने पर चमार महोदय ने अपने घर पर महार जाति वालों को भी आमंत्रित किया।

6. 1928 में शिवभांगी में विट्टल मंदिर में अछूतों के मंदिरों में प्रवेश करने पर सावरकर जी का भाषण हुआ।

7. 1930 में पतितपावन मंदिर में शिवू भंगी के मुख से गायत्री मंत्र के उच्चारण के साथ ही गणेशजी की मूर्ति पर पुष्पांजलि अर्पित की गई।

8. 1931 में पतितपावन मंदिर का उद्घाटन स्वयं शंकराचार्य श्री कूर्तकोटि के हाथों से हुआ एवं उनकी पाद्यपूजा चमार नेता श्री राज भोज द्वारा की गई थी। वीर सावरकर ने घोषणा की कि इस मंदिर में समस्त हिन्दुओं को पूजा का अधिकार है और पुजारी पद पर गैर-ब्राह्मण की नियुक्ति होगी।

इस प्रकार के अनेक उदाहरण वीर सावरकर जी के जीवन से हमें मिलते हैं जिनसे दलित उद्धार के विषय में उनके विचारों को, उनके प्रयासों को हम जान पाते हैं। सावरकर को स्मरण करने का मूल उद्देश्य दलित समाज को विशेष रूप से सन्देश देना है। जिसने राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिए सवर्ण समाज द्वारा अछूत जाति के लिए किए गए सुधार कार्यों की उपेक्षा कर दी थी और उन्हें केवल विरोध का पात्र बना दिया था। वीर सावरकर महान क्रांतिकारी श्याम वर्मा जी के क्रांतिकारी विचारों से लन्दन में पढ़ते हुए संपर्क में आये थे। श्यामजी कृष्ण वर्मा स्वामी दयानंद के शिष्य थे। स्वामी दयानंद के दलितों के उद्धार करने रूपी चिंतन को हम स्पष्ट रूप से वीर सावरकर के चिंतन में देखते हैं।

ऐसे हमारे आजादी के दीवाने वीर सावरकर को हमारा शत शत नमन।

मूर्द्धन्य संन्यासी एवं वैदिक सिद्धांतों के निष्ठावान प्रचारक स्वामी दीक्षानन्द जी सरस्वती

-डॉ. सुन्दरलाल कथूरिया

आर्यजगत् के प्रतिष्ठित संन्यासी, प्रकाण्ड वैदिक विद्वान्, मौलिक चिन्तक, प्रभविष्णु प्रवचनकर्ता, यशस्वी लेखक, स्तरीय वैदिक ग्रंथों के प्रकाशक, तत्त्ववेत्ता, योग शिरोमणि, आदित्य ब्रह्मचारी, सर्वस्व त्यागी, आदर्श आचार्य, महर्षि दयानन्द के समर्पित सेनानी, वैदिक सिद्धांतों के निष्ठावान प्रचारक, स्वतन्त्रता सेनानी, राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रबल समर्थक, गौरक्षा आन्दोलन के पुरोधा, अध्यात्मचेता, देश-विदेश में आर्ष विचारधारा, वैदिक दर्शन एवं मानव-मूल्यों के प्रचारक-प्रसारक स्वामी दीक्षानन्द जी बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे। समस्त प्रकार की एषणाओं से मुक्त, मुक्तिमार्ग के पथिक स्वामी दीक्षानन्द जी का आर्य समाज के मिशन को आगे बढ़ाने में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण योगदान है। वे आर्यजगत् के उन कुछ विरले संन्यासियों में से एक थे जो वेद-विद्या पारंगत थे, जिनकी कथनी-करनी एक थी तथा जिनका समस्त जीवन 'मनुर्भव' का दिव्य संदेश देने के लिए समर्पित था। लोकोपकार की भावना उनमें कूट-कूट कर भरी थी और वे सच्चे अर्थों में संन्यासी थे।

स्वामी दीक्षानन्द जी का जन्म 10 जून, 1918 ई. को मध्यवर्गीय कायस्थ परिवार में हुआ था। उनका बचपन का नाम कृष्ण स्वरूप था। प्रारंभिक शिक्षा के उपरान्त उन्होंने उपदेशक विद्यालय, लौहार एवं गुरुकुल भटिण्डा में अध्ययन किया। बचपन से ही शिक्षण एवं अध्यात्म के प्रचार में उनकी रुचि थी। अध्ययन-काल में उनके प्रमुख गुरु पं. बुद्धदेव विद्यालंकार थे, जो बाद में स्वामी समर्पणानन्द के नाम से विख्यात हुए। इनके प्रति स्वामी दीक्षानन्द जी के मन में अत्यन्त समादर एवं श्रद्धा का भाव अन्त तक बना रहा। शिक्षा सम्पन्न हो जाने

के उपरान्त कृष्ण स्वरूप जी ने उपदेशक विद्यालय, भटिण्डा की स्थापना की, जहाँ वे आचार्य कृष्ण के नाम से जाने जाते थे। संन्यासाश्रम में प्रविष्ट होने के पूर्व तक वे इसी नाम से ख्यात रहे। गुरुकुल प्रभात आश्रम, टिकरी, मेरठ में सन् 1948 से सन् 1956 तक उन्होंने आचार्य पद को सुशोभित किया। आचार्य कृष्ण ने सन् 1975 में आर्यसमाज के शताब्दी समारोह में स्वामी सत्यप्रकाश जी से संन्यास की दीक्षा ली और वे स्वामी दीक्षानन्द के नाम से सुविख्यात हो गए। वैदिक विषयों में शोध के प्रति स्वामी दीक्षानन्द जी की गहरी रुचि थी, अतः सन् 1978 ई. में अपने श्रद्धेय गुरु स्वामी समर्पणानन्द जी के स्मृति को अक्षुण्ण रखने के लिए उनके नाम पर 'समर्पण शोध संस्थान' की स्थापना की। इस संस्थान के माध्यम से उन्होंने न केवल मौलिक अनुसंधान के लिए शोधार्थियों को प्रेरित किया, वरन् वैदिक साहित्य से जुड़े बहुत-से स्तरीय ग्रंथों का प्रकाशन भी किया।

स्वामी दीक्षानन्द जी वाग्मी वक्ता ही नहीं, सिद्धहस्त लेखक भी थे। वे सच्चे अर्थों में तपस्वी थे। उनके ग्रंथों में उनके चिन्तन की दीप्ति और विश्लेषण-क्षमता के दर्शन होते हैं। यों तो उनके ग्रंथों की संख्या बहुत बड़ी है, पर उनके कुछ प्रमुख ग्रंथ हैं- मृत्युंजय सर्वस्व, अग्निहोत्र सर्वस्व, उपनयन सर्वस्व, ओंकार सर्वस्व, उपहार सर्वस्व, स्वाध्याय सर्वस्व, दो पुटन के बीच, सत्यार्थ कल्पतरु, ए लविंग टोकन, वैदिक कर्मकाण्ड पद्धति, वाल्मीकि के पुरुषोत्तम राम, गुरुकुल शतकम्, सम्राट् शतकम् आदि। उनका प्रचुर लेखन उनकी विद्वत्ता, स्वाध्यायी प्रवृत्ति, श्रम-साधना, गुरु-गंभीर विवेचन-विश्लेषण, विषय की अतल गहराइयों में पैठ एवं मौलिक चिन्तन का साक्षी है। उनका तल-स्पर्शी लेखन समाधिस्थ अवस्था में लिखा गया लगता है और इससे आर्ष साहित्य की निश्चय ही श्रीवृद्धि हुई है। यद्यपि उनका समग्र लेखन तर्क-प्रमाण-पुरस्सार और

वैज्ञानिक दृष्टि से ओत-प्रोत है तथापि उसे हृदयंगम करने में कोई कठिनाई नहीं होती। उनका लेखन पाठकों के लिए प्रेरक और दिशा-निर्देशक है। उनके शास्त्रानुमोदित मन्तव्यों-उपदेशों पर आचरण कर कोई भी पाठक या साधक प्रेय से श्रेय एवं अन्नमय कोश से आनन्दमय कोश की ओर प्रस्थान कर सकता है।

स्वामी दीक्षानन्द जी ने बहुत-से ग्रंथों का सम्पादन-प्रकाशन कर माँ-भारती के भण्डार को भरा तथा जन-जन तक वैदिक मान्यताओं को पहुँचाने का भरसक प्रयास किया। 'समर्पण शोध संस्थान' से उनके द्वारा प्रकाशित कुछ ग्रंथों के नाम हैं- वैदिक उपदेश माला, पाणिनीय प्रवेशिका, ऋग्वेद मण्डल-मणि-सूत्र, यजुर्वेद-अथर्ववेद-भाष्यम्, वैदिक नारी, आर्ष-ज्योति, ऋग्वेद-ज्योति, सामवेद-भाष्यम्, समाज का कायाकल्प, श्रुति सौरभ, वेदों का यथार्थ स्वरूप, वैदिक दर्शन, वैदिक स्वर्ग, अनादि तत्त्व, योगेश्वरकृष्ण, Glimpeses of Dayanand, works of Guru Datta, Vision of Truth, Anthology of Vedic Hymns आदि। कहने की आवश्यकता नहीं कि इन ग्रंथों के स्वाध्याय से कोई भी व्यक्ति आर्ष सिद्धांतों से परिचय प्राप्त कर विद्वान् और ज्ञानी बन सकता है तथा इन पर आचरण कर आत्मोत्कर्ष को प्राप्त कर सकता है। आचरणविहीन कोरा ज्ञान तो किसी काम का नहीं। ऐसे विद्वान् को तो वेद भी पवित्र नहीं कर सकते आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः।

स्वामी दीक्षानन्द जी तलस्पर्शी वैदिक विद्वान् एवं तत्त्वदर्शी ऋषि थे। आर्यसमाज एवं आर्ष सिद्धांतों के प्रति वे सर्वात्मना समर्पित थे। सत्य सनातन वैदिक सिद्धांतों को वे जन-जन तक पहुँचाना चाहते थे। वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार की उनमें ललक थी। 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' के स्वप्न को वे साकार करना चाहते थे, अतः देश-विदेश में उन्होंने प्राण-पण से वैदिक दर्शन, आर्य समाज की मान्यताओं एवं मानव-मूल्यों

का प्रचार-प्रसार किया। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने मॉरिशस, दक्षिण अफ्रीका, डरबन, नैरोबी (केन्या पूर्वी अफ्रीका) आदि देशों में वेद-प्रचार का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। अपने ज्ञानवर्द्धक, शास्त्र-सम्मत, वेदानुकूल, प्रभावपूर्ण प्रवचनों से उन्होंने असंख्य लोगों के जीवन का निर्माण किया, उन्हें यज्ञ संस्कृति से जोड़ा, आत्मोन्मुख किया तथा दुर्गुणों का परित्याग कर सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी। मैं स्वयं को सौभाग्यशाली मानता हूँ कि मुझे स्वामी दीक्षानन्द जी के प्रेरक प्रवचन सुनने के अनेक अवसर मिले- आर्य समाज, बी-2 ब्लॉक, जनकपुरी एवं अन्य आर्य सभाओं में भी। किसी भी ख्यात व्यक्ति के समान स्वामी दीक्षानन्द नहीं, स्वामी दक्षिणानन्द हैं।' अपने अनुभव के आधार पर मैं यह कह सकता हूँ कि यह उनके विषय में मिथ्या और भ्रामक प्रचार था। जिन वर्षों में मैं आर्यसमाज, बी-2 ब्लाक, जनकपुरी का प्रधान था, मैंने कई बार उनसे यहाँ प्रवचन के लिए आग्रह किया और मुझे सदैव उनका आशीर्वाद मिला। मैंने लिफाफे में रखकर जो भी दक्षिणा उन्हें सादर भेंट की, उन्होंने सहर्ष स्वीकार की और कभी कोई ननु-नच नहीं की।

स्वामी दीक्षानन्द जी की अग्निहोत्र में गहरी निष्ठा थी। वे यज्ञानुष्ठान को विधि-विधान और श्रद्धा के साथ करने के पक्षधर थे। वे यज्ञ की प्रक्रिया और याज्ञिक विश्लेषण में बहुत दक्ष थे। यज्ञाग्नि को बार-बार चिमटे से छेड़ने के वे विरोधी थे। उनका कहना था कि यज्ञाग्नि को सहज-स्वाभाविक रूप में प्रज्वलित होने दीजिए और जब तक बहुत विवशता न हो, उसके साथ छेड़-छाड़ न कीजिए।

स्वामी दीक्षानन्द जी अग्नि के समान तेजस्वी और सर्वत्यागी प्रवृत्ति के संन्यासी थे। भारत के महामहिम राष्ट्रपति ज्ञानी ज़ैल सिंह ने उन्हें 'योग शिरोमणि' की उपाधि से विभूषित किया था। स्वामीजी हैदराबाद मुक्ति सत्याग्रह, 1939 के सेनानी थे। वे

बन्दी बनाए गए और छः महीने तक कारावास में रहे। सन् 1959 ई. में चण्डीगढ़ के हिन्दी सत्याग्रह के वे सक्रिय सहभागी थे तथा सन् 1967 में दिल्ली में हुए गौ-रक्षा आन्दोलन में उन्होंने एक जत्थे का नेतृत्व किया था। 'कुर्वन्नेवेह कर्माणि' का आदर्श यावज्जीवन उनके सामने रहा। दिल्ली में पंचभौतिक शरीर का दिनांक 15 मई, 2003 को परित्याग कर वे सद्गति को प्राप्त हुए।

उनकी पावन स्मृति में, उनकी पुण्यतिथि के अवसर पर उनके परम श्रद्धालु भक्त श्री दर्शन कुमार जी अग्निहोत्री वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, नालापाणी, देहरादून में स्वामी दीक्षानन्द स्मृति दिवस का आयोजन कर अनेक विद्वानों को सम्मानित करते हैं। स्वामी दीक्षानन्द जी के 11वें स्मृति-दिवस के अवसर पर वे मुझ अकिंचन को भी 11.5.2014 को 'वेदश्री सम्मान' से अलंकृत कर चुके हैं। उनके इस प्रयास की जितनी सराहना की जाए, कम है।

वैदिक सिद्धांतों के निष्ठावान प्रचारक, आर्य समाज के अनन्य सेवक, मौलिक चिन्तन से युक्त दर्जनों ग्रंथों के प्रणेता, अनेक आन्दोलनों के सक्रिय सहगामी, मूर्द्धन्य संन्यासी श्री स्वामी दीक्षानन्द जी अपने पार्थिव शरीर से आज हमारे बीच नहीं हैं, पर वे अपने कर्तृत्व के बल पर यावच्चन्द्र दिवाकरौ जीवित रहेंगे-

जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।
नास्ति येषां यशः काये जरामरणजं भयम्ः।।

बी3/79, जनकपुरी,
नई दिल्ली-110058

अहिंसात्मक सत्याग्रहों द्वारा योगदान

–सत्यप्रिय शास्त्री

राजनीतिक स्वतन्त्रता के क्षेत्र में गाँधीजी के गुरु गोपालकृष्ण गोखले माने जाते हैं। गोखले को यह विचार अपने आचार्य महादेव गोविन्द रानडे से प्राप्त हुआ। परन्तु रानडे तक यह विचार उनके गुरु महर्षि दयानन्द सरस्वती से पहुँचा था। पूना में 1875 में इनका समागम हुआ था, घनिष्ठता यहाँ तक बढ़ी कि महर्षि ने रानडे को अपनी उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा में नियुक्त किया था। इस प्रकार गाँधीजी को यह विचार मूलतः महर्षि दयानन्द से ही मिला था। यह भिन्न बात है कि गाँधीजी के हिन्दू–मुस्लिम एकता विषयक विचार महर्षि से भिन्न थे। यह गाँधीजी के विदेशी शिक्षा से प्राप्त चिन्तन पर आधारित थे और उतने ही अंश में वे सदा असफल रहे, अस्तु, गाँधीजी को महात्मा पद से विभूषित करने वाले अमर शहीद स्वा. श्रद्धानन्द जी थे जिनका काँग्रेस के मंच पर भी समान प्रभाव रहा है। स्वाधीनता की तीन मूर्तियों में लाजपतराय तो महर्षि के प्रकट शिष्य थे, आर्यसमाजी नेता इन्द्र विद्यावाचस्पति का योगदान भी किसी से कम नहीं था। देशबन्धु गुप्ता, घनश्याम सिंह गुप्त, भीमसेन सच्चर, म. कृष्ण एवं उनके दोनों पुत्र, म. खुशहालचन्द (महात्मा आनन्दस्वामी) तथा उनके सभी पुत्र, सिन्ध के ताराचन्द गाजरा, हैदराबाद के पं. नरेन्द्र, विनायकराव, उ.प्र. के चौ. चरणसिंह, चन्द्रभानु गुप्त, गोविन्दवल्लभ पन्त, लालबहादुर शास्त्री, राजस्थान के चांदकरण शारदा, कर्मवीर श्री जियालालजी, हरियाणा के आचार्य भगवानदेवजी, स्वा. रामेश्वरानन्दजी, पंजाब के चौ. वेदव्रतजी, वैद्य रामगोपालजी, अजितसिंह सत्यार्थी, देशप्रसिद्ध वक्ता कु. सुखलालजी आर्यमुसाफिर, बिहार के स्वा. अभेदानन्दजी ; इसी प्रकार डॉ. गोकुलचन्द नारंग, स्वा, स्वतन्त्रानन्दजी, प्रि. देवीचन्दजी, स्वा. आत्मानन्दजी, अलगूरायजी शास्त्री, जयानन्द भारती, महावीर त्यागी, आचार्य नरदेव शास्त्री, स्वा. सत्यदेव परिव्राजक इत्यादि सभी लोग आर्यसमाज से स्वाधीनता की प्रेरणा प्राप्त करते रहे हैं, इतना ही नहीं बल्कि दादाभाई नौरोजी ने भी सत्यार्थप्रकाश पढ़कर उससे स्वाधीनता की प्रेरणा ली थी।

अहिंसात्मक सत्याग्रहों में सर्वप्रथम 1921 का असहयोग आन्दोलन हुआ, जिसमें सरकार का सहयोग त्याग दिया गया। यद्यपि ऋषि

दयानन्द सरस्वती तो परोपकारिणी सभा की स्थापना के समय ही इसका बीजारोपण कर गये थे क्योंकि उन्होंने उसके नियमों में लिखा है कि इसका पारस्परिक कोई भी झगड़ा सरकारी अदालत में न भेजकर आपस में ही निपटाना चाहिए, यही बीज इस आन्दोलन के रूप में प्रकट हुआ। जब उक्त आन्दोलन की घोषणा म. गाँधी जी ने की तभी स्वा. श्रद्धानन्दजी महाराज ने गाँधीजी को तार देकर इस युद्ध में सम्मिलित होने की सूचना दी। सूचना में लिखा कि मैंने इस धर्मयुद्ध में सम्मिलित होने का पूर्ण निर्णय कर लिया है। पाठक जरा सोचों कि आर्यसमाजियों की दृष्टि में देश की स्वतन्त्रता के हेतु लड़ा जाने वाला संग्राम धर्मयुद्ध है। बस स्वामीजी के सम्मिलित होते ही प्रत्येक आर्यसमाजी जी-जान से उक्त आन्दोलन में कूद पड़ा। इसका स्थालीपुलाकन्याय से कुछ प्रामाणिक वृत्त निम्न है। जहाँ कहीं भी आर्यसमाज व आर्यसमाजी थे, वहीं कांग्रेस की शाखायें सुदृढ़ थीं। मेरठ जिले के दो हजार सत्याग्रहियों में से अधिकांश आर्यसमाजी ही थे, जिला बुलन्दशहर के कठोर यातनाऐं सहने वाले सत्याग्रहियों में अधिकांश आर्यसमाजी थे, इसी प्रकार जिला सुल्तानपुर मथुरा में अधिकांश आर्यसमाजी ही सत्याग्रही थे, आर्यसमाज के उपदेशक तथा कांग्रेसी नेता स्व. पं. शेरसिंह जी के अनुसार उस समय जेलों में 80 प्रतिशत आर्यसमाजी थे। कहते हैं कि पं. मोतीलाल नेहरु की अध्यक्षता में उस समय सत्यग्रहियों की जाँच के लिए एक कमेटी बनाई गई थी, जिसकी रिपोर्ट का सारांश था कि सत्याग्रहियों में लगभग सत्तर प्रतिशत आर्यसमाजी विचारधारा के लोग हैं। जब महात्मा गाँधी ने इसके साथ खिलाफत जैसे विशुद्ध साम्प्रदायिक प्रश्न को नत्थी कर दिया और अपनी काल्पनिक अहिंसा नीति को बरकरार रखने के कारण इसे स्थगित कर दिया, तब सारा देश निराशा के समुद्र में डूब गया तथा साम्प्रदायिक दंगे भड़क उठे, जिसका मूल कारण गाँधीजी की अदूरदर्शिता ही थी। इसके पश्चात् 1931 में एक बार फिर देश ने गाँधीजी के नेतृत्व में अंगड़ाई ली। इस आन्दोलन में भी हम आर्यसमाजियों को अग्र पंक्ति में खड़ा हुआ पाते हैं, जो कि निम्न प्रमाणों से सिद्ध होता है। यदि समूचे उत्तरप्रदेश में सत्याग्रहियों की संख्या दो लाख थी तो उनमें आर्यसमाजियों की संख्या पचास हजार तो

निर्विवाद ही थी। आर्यसमाजी देवियों ने तो कमाल ही कर दिया, उनमें विद्यावती, सत्यवती, वरसोदेवी, प्रकाशवती तथा शकुन्तला जी मुख्य थीं जो कि आर्यसमाज मेरठ की सदस्या थी, रामकली जी ने तो अपने तीन नन्हें बालकों के साथ धरना दिया था। इसी प्रकार शोभावती, अम्बादेवी हलद्वानीवाली ने भी कारागार में यातनाएँ सहीं। हापुड़ में तो श्री पं. शिवदयालुजी ने विशाल राजनीतिक सम्मेलन की अध्यक्षता की और वहाँ के हजारों सत्याग्रहियों के साथ रेलयात्रा की। पंजाब में इसका गुप्त संगठन एवं संचालन स्वा. स्वतन्त्रानन्दजी महाराज कर रहे थे। दयानन्द उपदेशक विद्यालय की तलाशी भी पुलिस ने बड़ी गहराई से ली थी, क्योंकि स्वामीजी उसके आचार्य थे, वहाँ के छात्रों ने भी उक्त आन्दोलन में भाग लिया था। आगरा मुसाफिर महाविद्यालय, जहाँ आर्यसमाज के लिये उपेदशक तैयार किये जा सकते थे, इन्हीं आन्दोलनों की चपेट में आकर बन्द हो चुका था। गुरुकुल कांगड़ी के आचार्य रामदेवजी ने भी अपने छात्रों के एक विशाल जत्थे के साथ सत्याग्रह कर रेलयात्रा की थी। गुरुकुल अनिश्चित काल के लिए बन्द कर दिया गया था। जब 1935 में कांग्रेस असेम्बलियों में जाने का कार्यक्रम बनाया और चुनाव लड़े, तब भी सबसे अधिक संख्या निर्वाचित सदस्यों में आर्यसमाजियों की ही थी। अब आती है भारत की आजादी की आखिरी मुहिम, 1942 का आन्दोलन। इस आन्दोलन में " करो या मरो" के गाँधीजी के नारे पर अपनी जान की बाजी लगाने वाले देशभक्तों में भी सबसे अधिक संख्या आर्यसमाजियों की ही थी। मिलाप परिवार, प्रताप परिवार सभी पहले से ही जेलों में धर लिये गये थे, गुजराँवाला गुरुकुल (पंजाब) में तो पुलिस ने घुसकर छात्रों तथा अध्यापकों को पीटा था। गुरुकुल घरौंडा (करनाल) को जिलाधीश जब्त करने का षड्यन्त्र कर रहा था क्योंकि वहाँ के छात्रों ने अपने आचार्य स्वा. रामेश्वरानन्दजी के निर्देशन में समीपस्थ रेलवे लाइन को उखाड़ दिया था। गुरुकुल झज्जर (रोहतक) में महीनों पुलिस घेरा डाले पड़ी रही थी क्योंकि वहाँ के आचार्य भगवानदेव सरकार विरोधी गतिविधियों में तल्लीन थे। स्वा. स्वतन्त्रानन्द जी को भयंकरतम जान कर लाहौर के शाही किले में नजरबन्द किया गया, क्योंकि इन्होंने हरियाणा प्रान्त में घूमकर किसानों से अपील

की थी कि वे सेना में भरती हुए अपने लोगों को कहें कि वे देशभक्तों पर गोली न चलायें, इसको सरकार ने राज्यविद्रोह समझा। उस समय स्वामीजी ने अंग्रेज सरकार को यह भी कहा कि हमारे सत्याग्रहियों से सरकार वह व्यवहार करे जैसा कि एक सरकार दूसरे देश के बन्दियों से किया करती है। पाठक इसकी गहराई में जाने का प्रयास करें। उस समय सरकार ने जिन तीन व्यक्तियों को सबसे अधिक भयानक करार दिया था, उनमें से अलगूराय शास्त्री तथा पं. शिवदयालु दो आर्यसमाजी थे। उस समय जब चारों ओर नाकाबन्दी कर दी गई थी तब पंजाब के प्रसिद्ध आर्यसमाजी नेता पं. रामभजदत्तजी गुप्त रूप से कांग्रेसी नेताओं से सम्पर्क कायम करके उनका संदेश जनता तक पहुँचाने का महत्त्वपूर्ण कार्य करते थे। इस आन्दोलन में हजारों आर्यों के घर उजड़े तथा हजारों ही बायनेटों तथा हण्टरों के शिकार बने। सारी ही आर्यसमाजी संस्थायें देशभक्तों के सिर छिपाने के विश्वस्त अड्डे साबित हुई थीं। इसके अतिरिक्त आर्यसमाजी भजनीकों ने गाँव-गाँव में बाजे-ढोलकों को गा-गा बजा-बजा कर जो जागृति उत्पन्न की वह अपने आप में एक स्वर्णिम अध्याय है। लेखक को स्मरण है कि उक्त आन्दोलन के समय इसके चाचा श्री हरलालसिंहजी कुरते के नीचे तिरंगा झण्डा छिपाये गाँवों में भजनों द्वारा जागृति उत्पन्न करते फिरते थे और इधर पुलिस हाथ में हथकड़ी लिये उन्हें पकड़ने के उद्देश्य से कई मास तक घेरा डाले पड़ी रही थी। इस प्रकार हम देखते हैं कि भारत की स्वाधीनता के लिए अहिंसात्मक पद्धति से जो लड़ाई लड़ी गई उसमें आर्यसमाजियों ने अन्यों की अपेक्षा अधिक बढ़-चढ़कर भाग लिया यह तथ्य इतिहास के प्रमाणों से सिद्ध हो जाता है। भारत की आजादी के हेतु लड़े जाने वाले संग्राम का सशस्त्र क्रान्तिकारी आन्दोलन इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण एक और पहलू है।

सशस्त्र क्रान्तिकारी आन्दोलन में योगदान

जिसे सामान्य भाषा में क्रान्तिकारियों का योगदान कहा जाता है, इस दृष्टि से विचारने पर तो आर्यसमाज का एक प्रखर राष्ट्रीय स्वरूप हमारे सामने आता है; जिस पर सारे आर्यजगत को गौरव तथा गर्व है। इस दृष्टि से देखें तो महर्षि दयानन्द सरस्वती के अमर शिष्य, क्रान्तिकारियों के पितामह श्यामजी

कृष्ण वर्मा का नाम हमारे सामने आता है। इनको महर्षि ने ही विदेशों में भेजा था, जहाँ जाकर इन्होंने इण्डिया हाऊस की स्थापना की थी, जो कि बाद में क्रान्तिकारियों का तीर्थस्थल बन गया था। इन्हीं की प्रेरणा से विनायक दामोदर सावरकर विदेश गये और इनसे ही देशभक्ति की दिशा में निर्देशन प्राप्त किया। सावरकर अपने को स्वामी दयानन्द का पक्का चेला कहते थे। अण्डमान के कारावास काल में वे कैदियों को सत्यार्थप्रकाश पढ़ाया करते थे। इन्हीं सावरकर के शिष्य मदनलाल डींगरा थे जिन्होंने लन्दन में कर्जन वायली को नरक भेजकर भारतमाता के अपमान का करारा बदला लिया था। ये स्वयं भी आर्यसमाजी परिवार से ही थे। इसी प्रकार 31 वर्ष तक विदेशों की खाक छानने वाले आजादी के परवाने राजा महेन्द्रप्रतापजी भी आर्यसमाजी वातावरण की ही देन थे। इन्हीं के साथ भारत को स्वतन्त्र करने की धुन में अपने को विदेशों में लापता कर देनेवाले हरिश्चन्द्रजी, स्वा. श्रद्धानन्दजी के पुत्र, आर्यसमाजी वातावरण से ही स्वाधीनता की घुट्टी पिये हुए थे। दिल्ली षड्यन्त्र में भाग लेने वाले भाई बालमुकुन्द, बलराज (म. हंसराज के पुत्र) दोनों ही आर्यसमाजी थे। प्रथम विश्वविद्यालय के समय विदेशी सरकार का तख्ता उलटने के लिए गदरपार्टी ने एक योजना बनायी थी, दुर्भाग्यवश भेद खुल जाने से वह सफल नहीं हुई तब बगावत के अपराध में अनेकों को फाँसी, कारावास आदि दण्ड दिये गये थे जिनमें पंजाब के सोहनलाल पाठक, राजस्थान के प्रतापसिंह बारहट,, जगतराम हरयाणवी आदि दृढ़ आर्यसमाजी ही थे। इनमें प्रतापसिंह बारहट के पिता केशरसिंह बारहट तो ऋषि दयानन्द से दीक्षा लेकर उनके शिष्य बने थे। इन्होंने राजस्थान में जीवन भर क्रान्ति का प्रबल नाद बजाया। इसी वीर ने कोटा के एक दुश्चरित्र महन्त के यहाँ स्वा. श्रद्धानन्द के दामाद डॉ. गुरुदत्त तथा अन्य क्रान्तिकारियों के साथ डाका डालकर मिलनेवाला धन देश की स्वाधीनता के कार्य में लगाने की योजना बनाई थी जिसमें इसको कालेपानी की सजा हुई थी। इसी प्रकार मैनपुरी षड्यन्त्र के मुखिया श्री पं. गेंदालालजी दीक्षित तो प्रत्यक्ष रूप में आर्यसमाजी थे। आप आर्यसमाजी शिक्षा संस्थाओं में अध्ययन कार्य करते रहे हैं। देवतास्वरूप भाई परमानन्द तो उन आर्यसमाजी उपदेशकों में से थे जो कि महर्षि के सन्देश के प्रचारार्थ विदेशों में भी गये थे

और देशभक्ति के अपराध में जिन्हें फाँसी के बदले कालेपानी की यातनाएँ सहनी पड़ीं। पञ्जाबकेसरी लाला लाजपतराय ऋषि दयानन्द के उन अमर शिष्यों में से थे जिनमें शब्दों में आर्यसमाज उनकी माता और ऋषि दयानन्द उनके पिता थे। इनकी देशभक्ति किसी से छिपी नहीं है।

काकोरी केस के अमर हुतात्मा

इसी प्रसंग में हमें काकोरी केस के अमर हुतात्मा बिस्मिल, रोशनसिंह तथा विष्णुशरण दुब्लिश के रूप में महर्षि के अमर शिष्य आजादी के मोर्चे पर खड़े नजर आते हैं। बिस्मिल तो सत्यार्थप्रकाश से ही जीवन प्राप्त करने वालों में से थे। इनको सशस्त्रक्रान्ति तथा देशभक्ति की दीक्षा देने वाले स्वामी सोमदेवजी आर्यसमाज के उपदेशक थे जिन्होंने शाहजहाँपुर आर्यसमाज मन्दिर में इनको दीक्षा दी थी। बिस्मिल नित्य हवन करने वालों में थे। ठा. रोशनसिंह अपने को आर्यसमाजी मानते थे। विष्णुराज दुब्लिश आर्यसमाज के सदस्य रहे। फाँसी के बाद राजेन्द्र लाहेड़ी की लाश का तो आर्यसमाजियों ने जुलूस निकाला था तथा सम्मानपूर्वक उनकी अन्त्येष्टि भी की थी।

भगतसिंह का दल

वीर भगतसिंह के दल में तो आर्यसमाज से प्रेरणा प्राप्त करने वालों की संख्या और अधिक प्रकट होती है। भगतसिंह के दादा अर्जुनसिंह कट्टर आर्यसमाजी थे। नित्य हवन करते थे। आर्यसमाज के उपदेशक भी रहे।

भगतसिंह के पिता किसनसिंह भी आर्यसमाज के सदस्य रहे। इनके यहाँ सारे संस्कार आर्यसमाजी विधि से ही होते थे। अब भी होते हैं। ये आर्यसमाजी संस्थाओं में पढ़ते रहे हैं। इनके साथ यशपालजी भी बचपन में गुरुकुल में पढ़ते रहे हैं। इनकी माताजी आर्यसमाजी थीं। सुखदेव भी बचपन में आर्यकुमार सभाओं में जाते थे। इनके चाचा अचिन्त्यरामजी आर्यसमाज के सदस्य थे। कमीशन के सामने गवाही देते हुए उन्होंने कहा था कि मैं तो आर्यसमाजी विधि से सुखदेव की लाश की अन्त्येष्टि करूँगा।

कश्मीर घाटी उत्पत्ति का आधुनिक सन्दर्भ में कथामय वर्णन

(कश्यपमर्ग से कश्मीर)

–*नरेन्द्र सहगल*

नैसर्गिक सौन्दर्य से ओत-प्रोत हिमालय की गगनस्पर्शी चोटियों की गोद में स्थित टसुरामय कश्मीर घाटी का वास्तविक नाम कश्यपमर्ग था। यह पावन भूमि समुद्रतल से 5000 फीट ऊँची होने के कारण भारत माँ का मस्तक कहलाती है। स्वर्ग की कल्पना को साकार करने की क्षमता रखने वाली इस घाटी का निर्माण मनुष्य ने किया होगा ऐसा विश्वास सत्य को झटका देने के समान है। अवश्य ही इस मोक्ष भूमि को विधाता ने स्वयं अपने सुन्दर हाथों से गढ़ा होगा, या फिर किसी महान सन्त-महात्मा ने अपनी घोर तपस्या से इस सुन्दर स्थान का निर्माण किया होगा। नीलमत पुराण के श्लोक क्रमांक 292 में इसी सत्य को प्रकट किया गया है। अर्थात् सर्वप्रथम प्रजापति महर्षि कश्यप ने अति घोर तपस्या करके कश्मीर का निर्माण किया था। वे सर्वहितकारी थे।

नीलमत पुराण में वर्णित कथा के अनुसार भारत का प्रायः सारा क्षेत्र एक भयानक जल प्रलय के परिणामस्वरूप पानी से भर गया। कालान्तर में भारत के सभी प्रान्त पानी निकल जाने के कारण मनुष्यों के जीवन-यापन के योग्य हो गए और वहाँ सारी सामाजिक व्यवस्थाएँ स्थापित हो गईं। परन्तु भारत के उत्तर में हिमालय की गोद में एक विशाल क्षेत्र अभी जलमग्न ही था। इस अथाह जल ने एक बहुत बड़ी झील का रूप बना लिया। तत्पश्चात् इस झील में ज्वालामुखी फटने जैसी क्रिया हुई और झील के किनारे वाली पर्वतीय चोटियों में अनेक दरारें पड़ने से झील का पानी बाहर निकल गया।

सती देश

एक सुन्दर स्थान उभरकर आया क्योंकि वह स्थान अग्नि की शक्ति ज्वालामुखी विस्फोट से बना था और अग्नि की शक्ति

को पौराणिक मतानुसार सती कहते हैं। इसलिए पौराणिक भूमि विशेषज्ञों ने इस प्रदेश का नाम सती देश रखा। इस भूखण्ड के मनोहर रूप एवं अद्‌भुत प्राकृतिक सौन्दर्य ने देवताओं तक को भी चकाचौंध कर दिया। अपने सेवा भाव और लोकोपकारी कार्यों के लिए प्रसिद्ध पौराणिक महर्षि कश्यप ने अपने प्रबल आत्मविश्वास और अजेय भुजबल के आधार पर आगे बढ़कर इस भूखण्ड को लोगों के निवास योग्य बनाने का निश्चय किया और अपने श्रमिक दलबल (मजदूर भाई) के साथ पर्वतों की कटाई एवं भूमि का समतलीकरण प्रारंभ कर दिया। सारा कार्य सफलतापूर्वक सम्पन्न हो गया परन्तु पानी को स्थाई रूप से बहने का मार्ग देने के लिए एक नदी की आवश्यकता थी।

कश्यप ने शंकर से सहायता माँगी। शंकर ने तुरन्त नदी बनाने के लिए विशेषज्ञों के दलों को भेजा। कश्यप ने खुदाई का मुहूर्त करने के लिए शंकर से ही आग्रह किया। शंकर ने अपने त्रिशूल से धरती में पहली चोट करके एक वितस्ती (बालिश्त) जितनी भूमि खोदकर खुदाई अभियान प्रारंभ किया। अतः वितस्ती मात्र स्थान से निकलने के कारण इस नदी का नाम वितस्ता पड़ा (जिसे आज झेलम कहते हैं)। इस प्रकार इस नदी ने पत्थरों की बड़ी-बड़ी शिलाओं को हटाकर, तोड़कर, अपना मार्ग स्वयं प्रशस्त किया और अनेक क्षेत्रों की प्यास बुझाती हुई एवं कृषि भूमि को उपजाऊ बनाती हुई सिन्धु नदी में जा मिली।

जब यह क्षेत्र पूर्ण रूप से समतल हो गया और वितस्ता (झेलम) नदी के घाट इत्यादि बनकर तैयार हो गए तब महर्षि कश्यप ने भारत के अन्य प्रान्तों से लोगों को यहाँ आकर बसने का विधिवत् निमन्त्रण भेजा। उनके निमन्त्रण को शिरोधार्य करते हुए भारत के कोने-कोने से सभी वर्गों एवं जातियों के लोग पहुँचे। कश्यप मुनि के ऋषि मण्डल (स्टाफ) ने सबको भूमि आवंटित कर दी। कश्यप की नाग जाति एवं

अन्य वर्गों के लोगों ने नगर-ग्राम बसाए और देखते ही देखते सुन्दर घर, मन्दिर आदि बन गए। यह सारा कार्य सम्पन्न हो जाने के बाद अब प्रश्न खड़ा हुआ कि इस प्रदेश का शासन किसे सौंपा जाए। तो सर्वसम्मति से जनता ने कश्यप के पुत्र नील को राजा घोषित कर दिया। नील कश्मीर देश के प्रथम राजा हुए। उन्होंने बड़ी कुशलता से प्रदेश का प्रशासन सँभाला।

कश्मीर में इन्द्र और शची

अब कश्मीर की ख्याति दूर-दूर तक पहुँची। इस ख्याति को सुनकर एक अन्य राजा इन्द्र (स्वर्ग नामक प्रदेश के अध्यक्ष) को भारत के इस सबसे बड़े और मनोरम पर्वतीय स्थान (हिल स्टेशन) पर घूमने की इच्छा हुई। राजा नील ने उनके ठहरने, घूमने इत्यादि की उत्तम व्यवस्था की। एक दिन सायं इन्द्र और शची एक झील के किनारे घूमते हुए प्रसन्न मुद्रा में मग्न थे तो अचानक सांग्रह नामक एक राक्षस ने कामवासना से ग्रसित होकर शची को छीनने हेतु इन्द्र पर आक्रमण कर दिया। राक्षस सांग्रह की सहायता हेतु कुछ अन्य राक्षस भी पहुँच गए। आक्रमण प्रबल था। इन्द्र ने पहले तो सुरक्षात्मक रुख अपनाया, फिर अपने वज्र से उस राक्षस को समाप्त कर दिया। इन्द्र और शची अपने प्रदेश में आ गए।

उसी वक्त नील का एक गश्ती दल वहाँ से निकला। उसने राक्षस की लाश के पास ही उसके बच्चे को देखा। वह बच्चा अपने मृत पिता के पास खड़ा रो रहा था। सैनिकों ने उस बच्चे को उठाया और राजा नील को सौंप दिया। नील ने उसे अपनी सन्तान की तरह पाला, पढ़ाया, लिखाया। बच्चा क्योंकि झील के किनारे बिखरे पानी में से उठाया गया था इसलिए नील ने उसका नाम जलोद्भव रखा। राजा ने इस बालक की शिक्षा की पूरी एवं योग्य व्यवस्था की। एक प्रशासक के द्वारा इस प्रकार अनाथ बच्चे को गोद लेने की आदर्श प्रथा से कश्मीर घाटी की संस्कृति और समाज व्यवस्था का परिचय प्राप्त होता है। इस जलोद्भव को नील ने कश्मीर की मुख्य धारा से मिलाकर

भारतीय राष्ट्रीयता में एकरस करने का पूरा प्रयास किया। परन्तु देशभक्ति और समाजसेवी जैसे गुणों से जलोद्भव दूर भागता गया। आखिर था तो राक्षस ही, अपने राक्षसी संस्कारों के कारण वह कश्मीर की धरती के साथ जुड़ न सका। उसकी इस अराष्ट्रीय मनोवृत्ति को विदेशी शक्तियों ने प्रोत्साहित किया। वह अब पूरी शक्ति के साथ कश्मीर के सद्भाव और वहाँ की सांस्कृतिक धरोहर को तहस–नहस करने में जुट गया। उसके भय से कश्मीर के मूल निवासी अपना सब कुछ वहीं छोड़कर भारत के अन्य प्रान्तों में पलायन कर गए।

गांधार, अभिसार, जुहुण्डूर, शक, खस, तंगड़, भांडो, मद्र, अन्तगिरि और बहिगिरी इत्यादि जातियों और क्षेत्रों के लोगों पर इस पापी और विदेशों के इशारे पर नाचने वाली इसकी मंडली ने अत्यचार किए। जलोद्भव की अलगाववादी गतिविधियाँ इतनी बढ़ गईं कि स्थानीय प्रशासन भी अस्त व्यस्त हो गया। चारों ओर हाहाकार मच गया। देशभक्त लोगों पर अमानवीय अत्याचार होने लगे।

राक्षसी मंडली

अराष्ट्रीय तत्त्वों की विध्वंस लीला के फलस्वरूप मद्र क्षेत्र से कश्मीर तक का सारा क्षेत्र उजड़ गया। भारत का यह हिस्सा अब भारतीयता से शून्य हो गया क्योंकि यहाँ के मूल निवासी ही वहाँ पर भारतीयता को बचाकर रखे हुए थे। इन्हें पलायन हेतु बाध्य करना यह आतंकवादियों की सबसे बड़ी सफलता थी। यही देशभक्त नागरिक उस राक्षसी मंडली के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा थे।

इस सारी परिस्थिति का सामना नील ने पूरी शक्ति के साथ किया। परन्तु वह इसे नियन्त्रित नहीं कर सका। उसने कश्मीर की देशभक्त प्रजा को पलायन करने से भी रोकने का प्रयास किया। किन्तु जलोद्भव के द्वारा प्रारम्भ की गई विनाशलीला के आगे सबने यही उचित समझा कि यहाँ रहे तो पूर्णतः समाप्त कर दिए जाएँगे। अतः यहाँ से कहीं अन्यत्र चले जाना

ही श्रेयस्कर माना गया। उस समय कश्यप ऋषि भारत भ्रमण के लिए गए हुए थे। जब उनको कश्मीर में चल रही अराष्ट्रीय गतिविधियों और विदेशी षड्यन्त्रों का समाचार मिला तो वे अपने सारे प्रवास कार्यक्रमों को रोककर तुरन्त कश्मीर पहुँचे। सारी स्थिति का जायजा लेने के पश्चात् उन्होंने तुरन्त घोषणा की अब मैं भ्रमण एवं तीर्थ यात्रा पर नहीं जाऊँगा। अब कश्मीर को सेना के हवाले करना होगा। मैं इसकी व्यवस्था करूँगा। जिन्होंने भी इस देश का विध्वंस किया है, प्रजा पर अत्याचार किया है, स्त्रियों पर बलात्कार किया है, हत्याएँ की हैं, मैं उनसे हत्याओं का हिसाब मागूँगा। ऐसी व्यवस्था की जाएगी कि कश्मीर देश से पलायन करके गई देशभक्त जनता वापस अपने घरों में सुखपूर्वक एवं सम्मानपूर्वक लौट सके। कश्यप मुनि ने नील को पूर्ण सैनिक सहायता का आश्वासन दिया और स्थानीय प्रशासन में घुसे हुए जलोद्भव के समर्थकों को निकाल बाहर करने का ठोस सुझाव दिया। कश्यप ने नील का उत्साहवर्धन करके कश्मीर को बचाने हेतु सेना के हवाले कर दिया। (अगर उस समय भारत में कांग्रेस की सरकार होती तो प्रधानमंत्री नील को कहते कि पहले जलोद्भव को कश्मीर का मुख्यमंत्री बनाओ फिर बाकी बात करेंगे और इस राष्ट्रद्रोही जलोद्भव को कश्मीर की सत्ता सौंप कर देशभक्त महाराजा नील को कश्मीर से जम्मू चले जाने का निर्देश दे देते। कश्मीर में धारा 370 लगाकर उसे विशेष दर्जा देकर अराष्ट्रीय तत्त्वों को इसकी आड़ में अपने षड्यन्त्र चलाने की पूरी सुविधाएँ प्रदान कर देते।)

परन्तु कश्यप ऋषि तो कांग्रेसी नहीं थे, उन्हें किसी वर्ग विशेष के थोक वोट भी नहीं लेने थे। इसलिए उन्होंने तुष्टीकरण की नीति न अपनाकर सख्ती से जलोद्भव की राक्षसी मंडली को जड़ से समाप्त करने का निश्चय किया। उनकी व्यवस्था और योजनानुसार विष्णु और शिव भी अपनी -अपनी सेना के साथ कश्मीर पहुँच गए। जलोद्भव और उसके साथी अपने गुप्त

ठिकानों पर छिप गए। जहाँ से निकल कर वे सेना पर वार करते और फिर भागकर छिप जाते।

सैनिक कार्रवाई

जलोद्भव के इस सारे प्रभाव क्षेत्र को सेना ने घेर लिया। चारों कोनों पर सेना की कमान कश्यप, शिव, विष्णु और वासुकी ने स्वयं सँभाल ली। चारों ओर से एक साथ सैनिक कार्रवाई शुरू हो गई। जलोद्भव और इसी तरह के अन्य लोग गुप्त स्थानों पर दुबक कर बैठ गए। उसके साथी जब बाहर निकल कर भागने लगे तो सभी मारे गए। एक भी जीवित नहीं बचा। विष्णु ने जलोद्भव को देखते ही अपने चक्र से उसका सिर धड़ से अलग कर दिया। इस सारे सैनिक अभियान में पलायन किए अनेक नागरिकों ने वहाँ पहुँचकर सेना की सहायता की क्योंकि सेना को कश्मीर की स्थानीय भौगोलिक जानकारी नहीं थी।

जलोद्भव की मृत्यु से कश्मीर में अराष्ट्रीय तत्व समाप्त हुए। महाराजा फिर से राज सिंहासन पर बैठे। सारी कश्मीर समस्या जड़ से समाप्त हो गई। पलायन करके गए कश्मीर के सभी लोग वापस अपने घर को लौटे। उन्हें पूरा सम्मान और सुरक्षा प्रदान की गई। सभी ने कश्यप मुनि के प्रति आभार प्रकट किया। कश्यप मुनि ने अपनी स्थगित तीर्थ यात्रा फिर से प्रारम्भ की। अब महाराजा नील ने कश्यप मुनि के आदेशानुसार प्रशासन में घुसे आतंकवादी तत्त्वों को चुन-चुनकर बाहर निकाला। भारत के अन्य क्षेत्रों में गए लोगों को कश्मीर में अपने उद्योग-धन्धे प्रारम्भ करने की सुविधाएँ दीं। पथभ्रष्ट हुए जवानों को राष्ट्र की मुख्यधारा में लाने के प्रयास युद्ध स्तर पर प्रारम्भ हो गए। भारत नन्दन वन कश्मीर की सुरम्य घाटियों में स्वर्ग के सुर फिर गूँजने लगे। आज फिर से भारत के मुकुटमणि कश्मीर में व्याप्त अलगाववाद, अशान्ति, जिहादी आतंकवाद से उत्पन्न राष्ट्रविरोधी परिस्थितियों को परास्त कर भारत माता के जयघोष गुँजाने के लिए समस्त देशवासियों को इस महत् कार्य में जुटना होगा।

मौत तो आनी ही है,
उससे भला क्या डरना!

–खुशवंत सिंह, पत्रकार

एक बार मैंने दलाई लामा से पूछा कि मृत्यु का सामना कैसे करना चाहिए? उन्होंने ध्यान करने की सलाह दी। एक बार मैं मुंम्बई में आचार्य रजनीश से मिला। मैंने उनसे अपने भय के बारे में बात की। उन्होंने बताया कि मौत के भय से पार पाने का एकमात्र जरिया यह है कि हम मरते हुए को देखें। मैं यह बहुत दिनों करता रहा हूँ। मैं शायद ही किसी की शादी में जाता हूँ, लेकिन अंतिम संस्कार में जरूर जाता हूँ, मैं मृत व्यक्ति के रिश्तेदारों के साथ बैठता हूँ और अक्सर निगमबोध घाट भी जाता हूँ और वहाँ लपटों में जलते शरीरों को देखता हूँ। इसने मेरी क्षुद्रताओं को साफ कर दिया। इसने गुमान को तोड़ दिया और मेरी मदद की कि जीवन के झटकों को सहज भाव से ले सकूँ। मै अपने जीवन का जायजा लेता हूँ और जो कुछ भी मुझे मिला, उसके लिए शुक्रगुजार होता हूँ। मुझे लगता है कि मैं मौत से इसलिए डरता था क्योंकि मुझे यह नहीं लगता था कि मौत के बाद मैं कहाँ होऊँगा। ईश्वर की मौजूदगी को स्वीकार कर पाने की मेरी असमर्थता, मौत के बाद के जीवन की संभावना को अस्वीकार करती है कि जो जिंदा है, उसकी मौत पक्की है। इसलिए जो होना ही है, उसके लिए दुखी नहीं होना चाहिए। जीवन के बाद जीवन का कोई प्रमाण नहीं है इसलिए मुझे यह डर लगता है कि यह शून्यता में मिल जाना है।

मौत आखिरी पूर्णविराम है। इससे आगे कुछ भी नहीं। यह एक ऐसा शून्य है, जिसको कोई भी नहीं भेद पाया। इसका कोई कल नहीं है। मृत्यु की प्रक्रिया तो तभी शुरू हो जाती है, जब हम पैदा होते हैं। मैंने इस बात को काफी पहले ही समझ लिया था कि मेरे पास जीने के लिए एकमात्र जीवन है, यह नहीं जानता था कि इसका अंत कब होने वाला है।

इसलिए मैंने यह फैसला किया है कि इस जीवन से मैं जितना ले सकता हूँ, उतना ले लूँ। मैंने अपना जीवन भरपूर जिया है। मैंने दुनिया घूमी है, अपनी इंद्रियों का आनंद उठाया, प्रकृति की सुंदरता का आनंद उठाया है और उन सबका जो उसके पास देने के लिए था। मैंने सर्वश्रेष्ठ भोजन का स्वाद लिया है, बेहतरीन संगीत सुना है और बेहतरीन औरतों का साथ पाया है। जो समय मुझे मिला है, मैंने उसका बेहतर उपयोग किया है।

आजकल मैं मृत्यु के बारे में पहले से अधिक सोचता हूँ और मैंने उसके बारे में दुखी होना छोड़ दिया है। मुझे मौत का सामना तब करना पड़ा, जब मेरी पत्नी का देहांत हुआ। अकेला रहना पसंद करने के कारण मैंने सांत्वना देने आने वाले मित्रों को आने से हतोत्साहित किया। मैंने पहली रात अकेले अंधेरे में कुर्सी पर बैठकर बिताई। कुछ दिनों के बाद मैं अपनी सामान्य दिनचर्या पर लौट आया। मेरे मित्र आते रहे और मेरे संतुलन को भंग करते रहे तो मैं गोवा चला गया ताकि अपने आप में रह सकूँ।

मैंने अपना मृत्यु लेख 1943 में ही लिख लिया था। इस लेख में मैंने यह कल्पना की है कि ट्रिब्यून मेरी मृत्यु की घोषणा पहले पन्ने पर कर रहा है। उसका शीर्षक ऐसे पढ़ा जा सकता था- हमें सरदार खुशवंत सिंह की अचानक मौत के बारे में बताते हुए दुख हो रहा है। कल शाम 6 बजे उनकी मृत्यु हो गई। अपने पीछे वे एक जवान विधवा, दो छोटे-छोटे बच्चे और बड़ी संख्या में प्रशंसक और मित्र छोड़ गए हैं।

किताब खुशवंतनामा, (पेंग्विन इंडिया) से साभार

A UNIFIED INDIA IS NON-NEGOTIABLE

Political parties should not exacerbate a north-south divide

The southern states are unhappy with the terms of reference of the 15th Finance Commission, which is to decide the 'distribution between the Union and the States of the net proceeds of taxes'. The body is mandated to take into account the 2011 census instead of the 1971 census. The states in the south feel, it will result in penalising them for keeping population growth stable–while rewarding the northern states. Their collective discontent on the issue comes at a time when the politics of at least three of the southern states is in a churn. In Karnataka, ahead of the elections, the Congress government has decided to use sub-nationalism-by emphasising the primacy of Kannada and declaring its own flag. In Andhra Pradesh the TDP and the YSRCP, have taken positions against what they claim is the Centre's betrayal of not granting Special Category Status to the state. In Tamil Nadu, political space has opened up with Jayalalithaa's death. This is happening in a context when there has been an increasing opposition to what is seen as an effort by 'northern parties' to impose linguistic and cultural homogeneity. Take it all together and what you have is a disturbing picture of an emerging fault line between the North and the South. A unified India is a non-negotiable principle. And that is why it is essential that the Centre, state governments, and all parties address the divide. Here is what Delhi needs to do. The Centre must send a message to all five southern states–Tamil Nadu, Andhra Pradesh, Karnataka, Kerala, Telangana–that it will ensure that they do not lose on funds because of progressive policies and better governance. But this is beyond a specific policy technicality. PM Narendra Modi should reach out to the citizens in the south to reassure them of his commitment to diversity. The BJP needs to do more to convey that it has evolved from being just a North Indian Party. At the same time, here is what the southern governments and parties running them must do. Tough negotiations or differences with the Centre must not be projected as a battle with the centre or north. India cannot afford a North-South divide.

EINSTEIN'S DHARMA

-Ranjeni A Singh

I believe in luck. The harder I work the more luck I have, goes the famous saying. Whether it was hard work, plain luck or Saraswati that earned Einstein his iconic status, is something that even his brain-in-the brine cannot tell. Saraswati is the Hindu Goddess of knowledge. But Wikipedia lists 16 mythologies–including the Aborginal, Chinese and Norse– that have knowledge or wisdom deities. I wonder if the scientist would have had that much time at hand or even bothered– engrossed as he was with matters relating to energy, mass and speed of light– to identify the most suitable deity to propitiate.

Anyway, Einstein found the idea of a personal good childish and preferred an attitude of 'humility corresponding to the weakness of our intellectual understanding of nature and of our own being." It seems his humility comes through in that his own attitude is child like an attitude, as prescribed by the wise ones, human beings should have in relation to God.

By his own admission, Einstein believed in Spinozism, in which all reality is held to consist of one substance, of which minds and bodies are both attributes. This substance can be also called energy or god. If the energy resided within Einstein Vedantic teachings, like Spinozism, also say that God dwells in all beings there was no need for him to worship an outside deity. After all, motion (or action) of an object depends upon its energy content. So, is $E=MC^2$? Perhaps so in physics but certainly not when extrapolated to metaphysics because Einstein couldn't have been M-antra C-hanting!

Quotes by Einstien

- Nothing happens until something moves.
- Only those who attempt the absurd can achieve the impossible.
- If you want your children to be intelligent, read them more fairy tales.
- A clever person solves a problem. A wise person avoids it.
- Life is like riding a bicycle. To keep your balance, you must keep moving.
- The important thing is to not stop questioning. Curiosity has its own reason for existing.
- A true guinuis admits that he/she knows nothing.

Date of Pubn. : 30.6.2018 Posted at - NIE - H.O. Postal Date : 2-3 July 20
RNI Reg. No. DELBIL/2007/22062 Postal Regd. No. DL(W) 10/2143/2017-20

न तस्य प्रतिमाऽअस्ति यस्य नाम महद्यशः।
हिरण्यगर्भऽइत्येष मा मा हिंसीदित्येषा यस्मान्न जातऽइत्येषः।।

(यजु.32-3

ऋषि स्वयंभूब्रह्म, देवता-हिरण्यगर्भ परमात्मा, छन्दः- निचृत् पंक्ति

उस ईश्वर जैसा कोई नहीं है। उसकी कोई आकृति नहीं है। वह परिमाण रहित है। वह निराकार है। उसका नाम ही महान है। जिसने संसार क सुनहरा बीज अपने अंदर समाया हुआ है। ईश्वर अजन्मा है। वेद जिसक वर्णन करते हैं। हमें उस ईश्वर की आराधना करनी चाहिए ताकि हमें को हानि न हो।

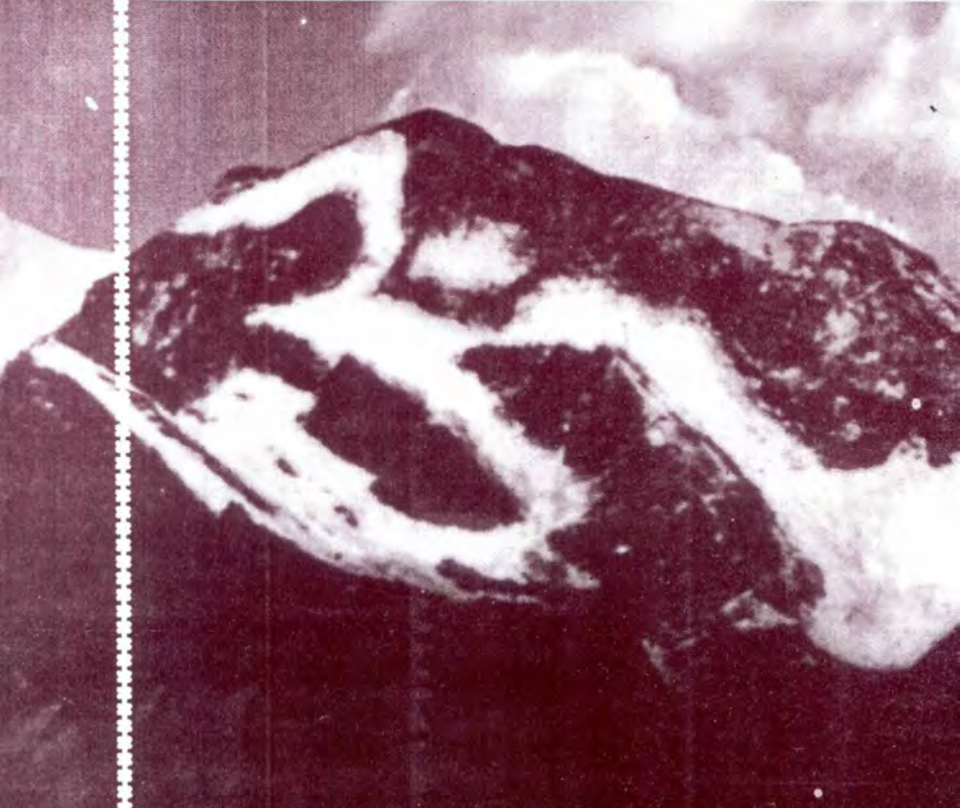

There is no one like Him. There is no image of Him. He cannot be me sured. He is formless. Great is His name. He sustains within Him gold seed fo the universe. He is unborn. We should pray Him. May He not har us. (Yujurveda 32–3)

Printed by - Friendsprintofast, New Delhi-